IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 6, June 2026 Impact Factor: 8.2

औपनिवेशिक काल में महिलाओं की सामाजिक स्थिति प्रेस की दृष्टि से

अनामिका मौर्या

इतिहास विभाग

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

शोध सार :

किसी भी समाज में महिलाओं की वास्तविक स्थिति उस समाज में मूल निर्धारण का कार्य करती है। समाज में महिलाओं के प्रति उपेक्षा उस समाज में विभिन्न प्रकार के बुराईयों एवं कुरीतियों को पनपने का अवसर प्रदान करती है। औपनिवेशिक भारत में स्त्रियों की दशा अत्यन्त दयनीय हो गई थी। सामाजिक तथा राजनैतिक स्तर पर हो रहे बदलावों के बीच प्रेस ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। औपनिवेशिक काल में महिलाओं की दशा सुधारने के लिए कई लोगों ने अथक प्रयास किये जिनमें राजा राममोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर आदि के नाम आते हैं। इसी दिशा में तत्कालीन प्रिन्ट मिडिया (प्रेस) की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही। उस समय प्रकाशित होने वाली पत्र-पत्रिकाएँ जैसे- 'बालाबोधिनी' (1874), 'स्त्री दर्पण' (1909), 'मर्यादा' नवम्बर (1909), 'चाँद' (नवम्बर 1920), आदि में महिला जागरण एवं उसकी छवि सुधारने सम्बन्धी अनेक लेख एवं विभिन्न प्रकार की सामग्री का प्रकाशन किया जाता रहा।

बीज शब्द : औपनिवेशिक भारत, महिला चेतना, सामाजिक कुरितियाँ, प्रेस, स्त्री शिक्षा, दहेज प्रथा, बालाबोधिनी, मर्यादा, चाँद, जागरण, संसार।

मूल आलेख : कोई भी समाज कितना सुसभ्य व सुसंस्कृत है, वह वहाँ की महिलाओं की स्थिति पर निर्भर करता है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की सिंधु सभ्यता से हमें ज्ञात होता है कि उस समय का समाज सुसभ्य एवं सुसंस्कृत था अतः यह कहा जा सकता है कि उसक काल में महिलाएँ भी समाज में सम्मानजनक स्थान पर रही होगीं।[1] इसी प्रकार प्रेमचन्द्र द्वारा सम्पादित 'जागरण' (1932) के 'महिला-जगत' सम्पादकीय में महिलाओं की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए एक लेख प्रकाशित हुआ जिसमें कहा गया है कि ''आज के उन्नत,

DOI: 10.48175/IJARSCT-36752

शिष्ट और सभ्य कहे जाने वाले देश, उस समय तक इस दशा को न पहुँच सके थे, जब तक कि उन्होंने 'महिला महत्त्व' को न समझ लिया। प्रत्येक देश की असभ्यता के इतिहास में वहाँ की महिलाओं की दशा बड़ी ही दयनीय और शोचनीय होना स्पष्ट-रूप से पाया जाता है।''[2]

स्त्री-दशा को दर्शाते हुए कार्ल मार्क्स के सहयोगी एंगेल्स ने अपनी पुस्तक ''फैमिली, प्राइवेट प्रापर्टी एण्ड ओरिजन ऑफ द स्टेट'' में महिला स्थिति को व्याख्यायित करने हेतु मार्क्सीय अवधारणा का प्रयोग किया। उनका मानना था कि महिला दासता से सम्बन्धित प्रश्न को समझने के लिए हमें इतिहास को जानना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि सिर्फ वैज्ञानिक आधार पर ही इसकी पुष्टि नहीं की जा सकती। उनका यह भी मानना था कि परिवार के दायरे में पति बुर्जुआ होता है और पत्नी सर्वहारा।[3] सीमोन द बुआ ने भी स्त्री अधिकारवादी अवधारणा को एक नया स्वरूप प्रदान किया। उन्होंने सेक्स एवं जेण्डर में अन्तर करते हुए सिद्ध किया कि स्त्री पैदा नहीं होती अपितु बनायी जाती है।[4]

औपनिवेशिक भारत में महिलाओं की स्थिति अत्यन्त सोचनीय थी। इनका अनेक प्रकार से शोषण किया जा रहा था। राष्ट्रीय स्तर पर तीव्र होती राजनीतिक क्रियाकलापों के साथ ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक विषयों का भी राष्ट्रीयकरण होने लगा था। विभिन्न इतिहासकारों जैसे शेखर बन्धोपाध्याय, मीरा, कौसांबी, संबोध गोस्वामी तथा जानकी नायर द्वारा सामाजिक एवं सांस्कृतिक विषयों (बाल विवाह, विधवा पुनर्विवाह तथा जातीय भेदभाव आदि) पर किए गए भिन्न-भिन्न क्षेत्रों (बंगाल, महाराष्ट्र, जयपुर तथा दक्षिण भारत) के सन्दर्भ में शोध, इस बात की पुष्टि करते हैं कि ये उस समय राष्ट्रीय स्तर पर समाज में चर्चा का विषय बन चुके थे।[5]

'संवाद कौमुदी' का प्रकाशन दिसम्बर सन् 1820 में भवानी चरण बैनर्जी द्वारा किया गया जिसके संपादक तारा चन्द दत्त थे। बाद में इस पत्रिका को राजा राममोहन राय ने ले लिया। इस पत्र का मुख्य उद्देश्य सामाजिक बुराई तथा सती प्रथा का खंडन करना था।[6] इसी प्रकार 1909 में इलाहाबाद से प्रकाशित 'स्त्री दर्पण' जिसका संपादन रमेश्वरी नेहरू ने किया, ने महिला अधिकारों, शिक्षा, विधवा, पुनर्विवाह, विवाह सुधार और राजनीतिक भागीदारी जैसे विषयों पर प्रमुखता से विचार रखे।[7] इसी प्रकार जनवरी 1909 में प्रकाशित 'इन्दु' जो हिन्दी की एक सचित्र मासिक पत्रिका थी, के लेखों का मुख्य विषय स्त्री सम्बन्धित सामाजिक तथा सांस्कृतिक विषय थे जिसे आगे चलकर आर्य महिला ने जारी रखा। 1911 में प्रयाग के अभ्युदय प्रेस से

प्रकाशित ‘मर्यादा’ ने भी अपनी लेखों में स्त्री शिक्षा, बाल विवाह, विधवा पुनर्विवाह तथा जातीय भेदभाव आदि विषयों को अधिक प्रकाशित किया। काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने लड़कियों के लिए मुख्यतः हिन्दू गृहस्थी, आदर्श दम्पति तथा सती चरित्र सन्गृह जैसी रचनाओं का प्रकाशन किया। इन सब के अतिरिक्त प्रयाग से ‘गृहलक्ष्मी’ (1909-1929), बनारस से ‘आर्य महिला’ (1917-1948), लखनऊ से माधुरी (1922-1950, नवल किशोर प्रेस) तथा इलाहाबाद से चाँद पत्रिका (1922-1940, विद्यावती देवी) आदि पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई जिनमें सम्पादन का कार्य भी स्त्रियाँ किया करती थी एवं पत्रिका का मुख्य विषय भी स्त्रियों से ही सम्बन्धित था।[8]

स्त्री शिक्षा से सम्बन्धी विषय पर प्रकाश डालते हुए फ्रांस की प्रसिद्ध लेखिका ‘मेरी द गोर्नी’ ने अपनी पुस्तक ‘इगेलिट डेस होम्स एट डेस फेमेस (1641) में स्त्री शिक्षा के तर्क वितर्क करते हुए महिलाओं की निम्न स्थिति के लिए उनमें शिक्षा के अभाव को एक बड़ा कारक माना है।[9] भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी जी की सक्रियता ने समाज के प्रत्येक वर्ग पर प्रभाव डाला। गाँधी जी के पूर्व समाज के महिलाओं के लिए ‘सरस्वती’ पत्रिका के सम्पादक महावीर प्रसाद द्विवेदी जी स्त्री सम्बन्धी सुधार के लिए संघर्षरत रहे थे। उनका मानना था कि 19वीं शताब्दी तक महिलाओं को एक नायिका के रूप में ही श्रृंगार रस के साथ पत्र-पत्रिकाओं एवं साहित्य में प्रस्तुत किया जाता था।[10] भारतेन्दु हरिश्चन्द्र महिलाओं के लिए ‘बालाबोधिनी’ (1 जनवरी, 1874) नामक पत्रिका का प्रकाशन किया। उनका इस सम्बन्ध में यह विचार था कि जब तक स्त्रियों को समाज में उचित स्थान नहीं मिलता, तब तक देश की स्थिति में सुधार नहीं हो सकता।[11] ‘बालाबोधिनी’ पत्रिका के माध्यम से भारतेन्दु जी ने स्त्री शिक्षा प्रचारार्थ हेतु व्यापक कार्य किया। इन्होंने इसके प्रथम अंक के प्रथम पृष्ठ पर जो निवेदन छापा, वह नारी जागरण के महत्त्व को उजागर करती है।[12] वसुधा डालमिया का इस सन्दर्भ में मानना है कि इस सम्बन्ध में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की रचनाओं में कुछ परिवर्तन अवश्य आया है, जिसमें उन्होंने स्त्री-पुरुष समानता एवं उनकी शिक्षा-दीक्षा की बात की हो किन्तु वह भी पूरी तरह से इससे प्रभावमुक्त नहीं हो सके थे।[13]

13 नवम्बर, सन् 1933ई0 के अंक 13 में ‘जागरण’ ने स्त्रियों की सामाजिक स्वतन्त्रता से सम्बन्धित एक लेख में लिखा कि- ‘‘मेरा यह दृढ़ विचार है कि जब स्त्री की पूरी सामाजिक स्वतन्त्रता नहीं मिलती, तब तक देश को पूरी स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती और इसी कारण देश की पूरी उन्नति भी नहीं हो सकती।

हिन्दुस्तान की औरतें यह साबित कर चुकी हैं कि सैकड़ों बाधाओं के होते हुए भी किस तरह वे देश-सेवा कर सकती है। जिस समय उन्हें शिक्षा, व्यायाम आदि की सहूलियतें मिल जायेगी, जो कि अभी तक पुरुषों की वस्तु समझी जाती है, उस समय भारतीय महिलाएँ एक उच्च पद को शोभित करेंगी।''[14] इसी प्रकार 12 अगस्त 1945 के अंक 23 में 'वीर अर्जुन' साप्ताहिक में ऐसी ही सामाजिक व्यवस्था से खीजता हुआ एक लेख प्रकाशित हुआ- ''हमें अपने पतियों का निर्वाचन अपनी ही पसन्दगी के अनुसार करना चाहिए। यदि हमारा भावी पति अयोग्य है तो हमें निस्संकोच होकर इन्कार कर देना चाहिए और यदि रूढ़िवादी कोई बखेड़ा करें तो शान्ति और साहस के साथ उसका विरोध करना चाहिए। 'मारे और रोने न दे' वाली नीति को अब हम अधिक नहीं सह सकती। पुरुष वर्ग ने हमें पैर की जूती समझ रखा है। उसने हमें अपनी विषय-वासना को तृप्त करने का खिलौना बना रखा है। इस हीनावस्था में अब हम अधिक न रह सकेंगी। जब हम स्वयं अपने पैरों पर खड़ी हो जाएगी तो ईश्वर भी हमारी सहायता करेगा।''[15]

समाज में व्याप्त पर्दा प्रथा पर 'सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज मैगज़ीन (सी0एच0सी0एम0) द्वारा विचार व्यक्त किया गया कि इस प्रथा से भारतीय महिलाओं का जीवन दुष्कर हो गया है। ऐसी कुप्रथाओं के नाम पर महिलाओं की उपेक्षा की जा रही है। महिलाओं को राष्ट्रीय विकास तथा जिम्मेदारियों से अलग-थलग कर दिया गया है और शिक्षा के अभाव में उनका जीवन पशु सदृश्य हो गया है। इस पत्रिका में स्त्री शिक्षा पर प्रकाश डालते हुए बताया गया कि समाज को यह अवश्य समझना चाहिए कि शिक्षा के अभाव में स्त्री उचित ढंग से न अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह कर सकती है और न ही अपने गृहस्थ जीवन से न्याय। इस लेख में यह भी विचार व्यक्त किया गया कि ''एक तरफ जहाँ स्त्री-पुरुष समानता तथा समान अधिकार की बात की जा रही है, वहीं दूसरी तरफ परम्पराओं तथा प्रथाओं के नाम पर महिलाओं को घर में कैद करके रखा जाता है।''[16]

देश में पाश्चात्य शिक्षा के प्रति डर का माहौल था लोगों का मानना था कि इसका अनुकरण करने से भारत की प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति नष्ट हो जायेगी। मर्यादा पत्रिका ने इसका समर्थन करते हुए लिखा कि इस पश्चात् शिक्षा से स्त्रियों पर पुरूषों के साथ वार्तालाप करना, सड़क पर मुँह खोलकर चलना, असभ्य विषयों (अश्लील) की चर्चा करना, गहने पहनना अंग्रेजी भाषा में बातचीत, पियानो बजाना इत्यादि सब सामान्य हो जाएगा तथा इसके भारतीय संस्कृति का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा।'' इस प्रकार के विचार इलाहाबाद के प्रयाग समाचार, लखनऊ के अवध समाचार तथा मदन मोहन मालवीय के अभ्युदय आदि में

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 6, June 2026 Impact Factor: 8.2

प्रकाशित होते थे कि किस प्रकार मिशनरी अपनी पश्चात् शिक्षा के जाल द्वारा भारतीय लड़कियों को फसा कर उनका धर्म परिवर्तन करा रहे हैं। 'मर्यादा' के एक अंक में लेखक लक्ष्मीशंकर अवस्थी, लाला लाजपतराय के विचारों को व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि लाला जी का यह विचार है कि समाज में लड़कियों को पश्चिमी शिक्षा देने का अर्थ है, उन्हें स्वतंत्र कर तितलियाँ बनाना।[17]

औपनिवेशिक कालीन भारत में अनेक कुप्रथा व्याप्त थी। जिनसे से ऐसी ही एक कुप्रथा 'सती प्रथा' थी। जिसने समय के साथ विकराल रूप ले लिया था। महिलाओं के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। उनके पति की मृत्यु होने के पश्चात् बलात् उन्हें आग में झोंक दिया जाता। दिसम्बर 1820ई0 में 'संवाद कौमुदी' का प्रकाशन कलकत्ता से भवानी चरण बैनर्जी द्वारा किया गया। इस पत्रिका के सम्पादक तारा चन्द दत्त थे। बाद में इस पत्रिका को राजा राम मोहन राय ने लिया। इस पत्रिका के माध्यम से उन्होंने तत्कालीन अनेकों सामाजिक बुराई तथा सती प्रथा का खण्डन कर समाज में व्याप्त कुरितियों पर कुठाराघात किया।[18] सती प्रथा का सर्वप्रथम विरोध राजा राममोहन राय ने किया। ऐसे अमानवीय प्रथा के विरूद्ध आंदोलन किया, अपने पत्रिका के माध्यम से लोगों में जागरण लाने का प्रयास किया। इनके निरंतर प्रयासों के ही परिणामस्वरूप सन् 1828 ई0 में तत्कालीन गर्वनर लार्ड विलियम बैंटिक द्वारा कानून बना कर इस प्रथा को अवैध घोषित किया गया। इस सम्बन्ध में पत्रकारों की राय थी कि सती होना स्त्री की इच्छा पर निर्भर होना चाहिए। किसी भी स्त्री को बलात् सती होने के लिए विवश करना अमानवीय कार्य है।[19]

उन दिनों भारतीय अन्य कुरीतियों में बाल विवाह अपने चरम सीमा पर पहुँच गया था। बाल-विवाह होने के अनेक कारण थे। जैसे- परिवार के बड़े-बूढ़ों का हठ, स्त्री-हठ, रूपये पैसे का लोभ, अशिक्षा आदि। इस प्रकार के विवाह का बड़ा ही दुष्परिणाम होता था।[20]

'नागरी नीरद' नामक पत्रिका में विधवा हुए महिलाओं का एक आँकड़ा दिया गया जो बहुत ही भयावह था जिसमें बताया गया- भारतीय विधवाओं की संख्या सवा दो करोड़ दस लाख है। जिसमें केवल 9 वर्ष तक की अवस्था वाली 7000 हैं, 14 वर्ष तक अवस्था वाली 2070000 हैं। 19 वर्ष तक की अवस्था वाली 3820000 हैं।[21] इसी प्रकार 'सरस्वती पत्रिका' में एक लेख में यह बताया गया कि विधवा विवाह पर लगाये गये प्रतिबन्ध से मुसलमान उतना प्रभावित नहीं होते जितना की हिन्दू। पत्रिका इस सम्बन्ध में आगे लिखता है कि हिन्दू समाज की विधवाएँ आर्थिक तथा सामाजिक दोनों रूप में अपने परिवार पर पूर्ण रूप से निर्भर हो

जाती है।[22] इस प्रकार सभी पत्रकारों ने विधवा विवाह का समर्थन किया किन्तु कुछ पत्रों जैसे धर्म दिवाकर, सारसुधानिधि आदि पत्रों ने विधवा विवाह का विरोध किया।

इसी प्रकार पत्रकारों ने समाज में व्याप्त बेमेल विवाह और बहुतपत्नीत्व प्रथा को भी नष्ट करने के लिए आवाज उठाई। बेमेल विवाह के दुष्परिणामों ने जनमानस को सर्वाधिक प्रभावित किया। इस कुरिति के परिणामों को लोक-गीतों (कजली) आदि के माध्यम से दिखाया गया-

‘‘नैहर में देबै बिताय बस विरथा वैजा जवानी रामा।
हरि हरि का करबे लैई छोटा सजनवाँ रे हरी।।’’[23]

बहुपत्नीत्व की प्रथा की समस्या से नारी जीवन स्तर बहुत दयनीय हो गया था। उन्हें मात्र भोग और विलास की वस्तु मानाजातथा, एक पुरूष एक से अधिक स्त्रियों से विवाह कर सकता था। इस सम्बन्ध में ‘हिन्दी प्रदीप’ लिखता है कि- ‘कुलीन इन दिनों वे ही गिने जाते हैं जो मन चाहे ब्याह कर सकें चार-पाँच ब्याह करें तो कोई बात नहीं। इसके विरोध में उसने आगे लिखा है कि- ‘‘मौसम से यह मालूम होता है कि दुनिया भर में स्त्री-पुरुष की संख्या लगभग बराबर है। क्या इससे यह नहीं जान पड़ता कि ईश्वर ने एक पुरुष के लिए एक ही स्त्री पैदा की है? उसकी इच्छा के प्रतिकूल कोई काम दंड के योग्य न होगा?[24]

भारतीय समाज में अनेक कुप्रथाओं से जिससे स्त्रियों की दशा दीन-हीन बनी थी ऐसी अनेकों कुप्रथाओं में से एक दहेज प्रथा भी थी। अनेक पिता दहेज देने के लिए कर्ज लेकर अपना पारिवारिक जीवन कष्टमय बना लेते हैं। अनेक लड़किया दहेज के भार से परिवार को मुक्त करने के लिए आत्महत्या कर लेती है। जुलाई 1880 ई0 के अंक में ‘हिन्दी प्रदीप’ ने लिखा है कि- खाने को जुड़ता नहीं, लड़की ब्याहना है। एक हजार हो तो ब्याही जाय जायदाद गिरो रख दी, रूपया कर्ज लिया और मनमाना खर्च किया। 2-3 वर्ष में ब्याज का ब्याज जोड़ते-जोड़ते दो हजार हुए। जायदाद गिरो रख दी। एक-दो-तीन बोल गये। खूब नाक की लाज रही।[25] इस प्रकार जागरण में भी हैदराबाद (सिंध) की आमिल लड़कियों से सम्बन्धित एक लेख प्रकाशित हुआ- हैदराबाद (सिंध) का समाचार है कि नौजवान आमिल लड़कियों ने कहा है कि, यदि हमारी जाति ने दहेज की कुप्रथा का त्याग नहीं किया, तो या तो हम आत्महत्या कर लेंगी, या मुसलमान बन जाएंगी।[26] इस प्रकार अनेक पत्रकारों ने दहेज प्रथा को समाप्त करने के लिए प्रयास किये।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 6, June 2026
Impact Factor: 8.2

'साप्ताहिक संसार' नामक पत्रिका में 'स्त्रियों के लिए कानून' नाम से एक लेख प्रकाशित किया गया जिसमें भारतीय समाज में व्याप्त स्त्रियों से सम्बन्धित कुप्रथाओं की रोकथाम से सम्बन्धित कानूनों का उल्लेख किया गया था- ''सन् 1899 में कानूनन सती प्रथा बन्द कर दी गयी। सन् 1856 में विशिष्ट विवाह कानून बना। इस कानून द्वारा किसी वर्ण और जाति के स्त्री पुरुष परस्पर में विवाह कर सकते हैं। वर-वधू को रजिस्ट्रार के आफिस जाकर विवाह के रजिस्टर पर हस्ताक्षर मात्र करना होता है। सन् 1923 ई0 में विशिष्ट विवाह कानून (सिविल मेरेज ऐक्ट) में आवश्यक सुधार किया गया। सन् 1930 में बाल विवाह पर शारदा एक्ट बनाकर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। यह कानून समस्त ब्रिटिश भारत में लागू है। प्रसन्नता की बात है भारत के कुछ प्रगतिशील रियासतों ने भी स्वेच्छा से अपने यहाँ ऐसे कानून बना दिये हैं। सन् 1937ई0 में वारिस कानून बनाया गया। स्त्रियों की हित की दृष्टि से यह कानून महत्त्वपूर्ण है। इस कानून द्वारा पति की मृत्यु के पश्चात् विभक्त और अविभक्त दोनों परिवारों में विधवा का पुत्र के समान हक मंजूर किया गया है। राव कमेटी-भारत सरकार ने स्त्रियों के अधिकार की दृष्टि से हिन्दू लॉं में सुधार करने के लिए एक कमेटी बनायी है। इस कमेटी ने दो कानूनों का मसविदा बनाकर जनता का अभिप्राय जानने के लिए उन्हें प्रकाशित किया है।[27]

निष्कर्ष

औपनिवेशिक काल में भारतीय महिलाओं की दशा सामाजिक, सांस्कृतिक एवं वैचारिक दृष्टिकोण से अनेकों अंतर्विरोधों से युक्त थी। इस सन्दर्भ में प्रेस ने स्त्री प्रश्न को सामाजिक सुधार के विषय के रूप में नहीं, अपितु वैचारिक एवं राष्ट्रीय विमर्श के अभिन्न अंग के रूप में सन्दर्भित किया तथा सती प्रथा, बाल विवाह, पर्दा प्रथा, स्त्री शिक्षा आदि विषयों को लगातार प्रकाशित कर लोगों में सामाजिक चेतना का विकास किया। इस दौरान स्त्री-केन्द्रित पत्रिकाओं का उद्भव महिला पत्रकारिता के इतिहास में एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ। अतः औपनिवेशिक भारत में प्रेस ने महिलाओं की दयनीय स्थिति को उजागर करने के साथ ही स्त्री जागरण, अधिकार, चेतना तथा सामाजिक परिवर्तन की एक वैचारिक पृष्ठभूमि को विकसित किया।

ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 6, June 2026
Impact Factor: 8.2

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. नरेन्द्र कुमार शर्मा, स्वतन्त्रता संग्राम और पत्रकारिता, आमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2011, पृ0सं0 172
2. जागरण (अंक 6), 26 सितम्बर 1932, भारत कला भवन, वाराणसी, पृ0सं0 18
3. सुनील महावर, राज्य एवं महिला मानवाधिकार, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2011; पृ0 60
4. सीमोन द बुआ, द सेकण्ड सेक्स, प्रभा खेतान द्वारा अनुदित स्त्री उपेक्षिता, हिन्दी पॉकेट बुक्स, नयी दिल्ली, 2002, पृ0सं0 52
5. विनोद कुमार, वाराणसी का सामाजिक तथा सांस्कृतिक अध्ययन (प्रेस की नजर से) प्रेस के आरम्भ (1845ई0) से गाँधी पूर्व (1920ई0) तक, ओरीजिनल्स, दिल्ली, 2016, पृ0 133
6. डॉ0 पद्माकर पाण्डे, हिन्दी पत्रकारिता और राष्ट्रीय आन्दोलन, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 1993, पृ0 72
7. फ्रांसेस्का ओरसिनी, हिन्दी सार्वजनिक क्षेत्र 1920-1940; राष्ट्रवाद के युग में भाषा और साहित्य, ओयूपी इंडिया, 2009, पृ0सं0 265
8. विनोद कुमार, पृ0 135, 140
9. मेजोर अगोसिन, वुमेन, जेण्डर एण्ड ह्यूमन राइट्स : ए ग्लोबल पर्सपेक्टिव, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2003, पृ0 21
10. सरस्वती, जून, 1903, भारत कला भवन, वाराणसी, पृ0सं0 35
11. डॉ0 वंशीधर लाल, भारतीय स्वतन्त्रता और हिन्दी पत्रकारिता, निर्मल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2017, पृ0 104
12. बालाबोधिनी (प्रथम अंक), 1 जनवरी, 1874, भारत कला भवन, वाराणसी
13. Vasudha Delmia (1997), The Nationalization of the Hindu Traditions, Oxford University, 1999, Pg. No. 247
14. जागरण, अंक 13, 13 नवम्बर सन् 1993ई0, भारत कला भवन, वाराणसी, पृ0 18
15. वीर अर्जुन 'साप्ताहिक', अंक-23, 12 अगस्त 1945ई0, भारत कला भवन, वाराणसी, पृ0 2

16. Indian Women and Their work, in Central Hindu College, Magazine, December, 1909, Page. No. 315
17. विनोद कुमार, पृ0 138, 139
18. डॉ0 पद्माकर पाण्डेय, , पृ0 72
19. डॉ0 वंशीधर लाल, , पृ0 108
20. विनोद कुमार, पृ0सं0 149
21. नागरी नीरद, वर्ष-1, अंक 39, सन् 1950, पृ0 4
22. सरस्वती, दिसम्बर 1916, पृ0 369
23. डॉ0 वंशीधर लाल, पृ0 106, 107
24. हिन्दी प्रदीप, 1 सितम्बर, 1879, पृ0 13-14
25. डॉ0 वंशीधर लाल, पृ0 107
26. जागरण, काशी, वर्ष 2, 21 अगस्त 1933, अंक-2, पृ0 6
27. साप्ताहिक संसार, काशी, वर्ष-3, 23 अगस्त 1945, अंक 44, पृ0 10